P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-8* April- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भोजदेव : आभिलेखिक साक्ष्यों के आलोक में

रागिनी राय
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग,
ईश्वरशरण पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में हमने 11वीं शताब्दी के महान परमार शासक भोजदेव की राजनीतिक एवं सांस्कृतिक उपलब्धियों का उल्लेख आभिलेखिक साक्ष्यों के आधार पर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। आवश्यकतावश हमने साहित्यिक साक्ष्यों का भी प्रयोग किया है। इन अभिलेखों में भोजदेव से सम्बन्धित जो भी सूचनाएँ प्राप्त होती हैं, उनको सर्वमान्य कालक्रमानुसार व्यवस्थित किया गया है। भोजदेव के शासनकाल में परमार वंश मालवा क्षेत्र में महत्वशाली हो गया था। राजनीतिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि यह वंश अपनी पराकाष्ठा पर था। भोज के समय में इस वंश की राजधानी उज्जयिनी से धारा में स्थानान्तरित होने से धार का महत्व बढ़ गया था, जो कि शैक्षिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों का महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया। इस प्रकार यह कार्य परमार अभिलेखों में प्राप्त भोजदेव के राजनीतिक एवं सांस्कृतिक उपलब्धियों का ब्यौरा प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द : अभिलेख, ताम्रपत्र, प्रशस्ति, विक्रम संवत, भोजदेव, परमार धार, कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इंडिकेरम।

प्रस्तावना

भोजदेव की गणना 11वीं सदी के सर्वश्रेष्ठ व महान शासकों में की जाती है। 'उदयपुर प्रशस्ति'[1] से ज्ञात होता है कि सिन्धुराज की मृत्यु के बाद उसके पुत्र भोजदेव का राज्यारोहण हुआ। 'मोडासा ताम्रपत्र अभिलेख'[2] परमार नरेश भोजदेव के शासनकाल से सम्बन्धित सर्वप्रथम प्राप्त अभिलेख है। इसके माध्यम से भोज का साम्राज्य सांबरकांठा (अहमदाबाद) तक विस्तृत प्रमाणित होता है जो गुजरात के चालुक्यों अथवा सोलंकी के समकालीन नरेशों की राजधानी अन्हिलपाटन से बहुत दूर नहीं था। कुछ साक्ष्यों के आधार पर व्यूलर[3] ने भोज के शासनकाल का प्रारम्भ 1010 ई0 के आसपास माना था, जोकि इस ताम्रफलक के आधार पर बिल्कुल सही उतरता है। उसके उत्तराधिकारी जयसिंह प्रथम का प्रथम अभिलेख 'मांधाता तामपत्र अभिलेख' वि0सं0 1112 अर्थात् 1056 ई0 का है अतः यह निश्चित है कि भोज ने लगभग 45 वर्षों (1010–1055–56 ई0) तक शासन किया।[4]

अभिलेखावलोकन :

भोजदेव पर एच0वी0 त्रिवेदी द्वारा सम्पादित कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इंडिकेरम अंक–VII, भाग–II एवं साथ ही ए0सी0 मित्तल द्वारा संपादित 'इंस्क्रिप्शंस ऑफ द इम्पीरियल परमाराज; पुस्तकें मुख्यतः एक आँकड़ा प्रस्तुत करते हैं। विश्वेश्वर नाथ रेऊ ने भोज पर कार्य किया है। भोज के कम से कम आठ अभिलेख प्राप्त होते हैं। दो अन्य तिथि रहित अभिलेख भी प्राप्त होते हैं, इसके अतिरिक्त उत्तरकालीन उदयपुर प्रशस्ति में भी भोजदेव से सम्बन्धित सामग्री प्राप्त होती है। मैंने इन साक्ष्यों के आधार पर यथावश्यक साहित्यिक साक्ष्यों की भी सहायता ली है।

उद्देश्यः

प्रस्तुत शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य आभिलेखिक साक्ष्यों के विशेष संदर्भ में '11वीं शताब्दी के परमार शासक भोजदेव' के राजनीतिक एवं सांस्कृतिक उपलब्धियों का सम्पूर्ण खाका खींचना है। इन अभिलेखों के विश्लेषण से बहुधा नवीन सूचनाएँ प्राप्त होती हैं, जो तत्कालीन राजनीतिक एवं सांस्कृतिक महत्व को उद्घाटित करना शोध का मुख्य उद्देश्य है।

विषय विस्तार

भोज के कम से कम आठ अभिलेख[5] प्राप्त होते हैं। दो अन्य तिथि रहित अभिलेख भी प्राप्त होते हैं। ये अभिलेख विक्रम संवत 1077

(1011 ई0) से विक्रम संवत् 1103 (1046 ई0) के हैं। यद्यपि कि ये अभिलेख मुख्यतः दानपत्र हैं फिर भी उसकी अन्य राजनीतिक उपलब्धियों सहित उसके राज्य–विस्तार का परिचय देते हैं। उदयपुर प्रशस्ति में भोज की विजयों का वर्णन हुआ है। उल्लिखित है कि, ''कर्णाट, लाटपति गुर्जर नरेश व तुरुष्कों जिनमें मुख्य चेदि नरेश इन्द्ररथ, तोग्गल तथा भीम थे की सेनाओं को जिसके भृत्य मात्रों ने ही विजित कर लिया था व इस कारण जिसकी पारंपरिक सेनाओं के बाहुबल की उग्रता की गणना की जाती है उसके योद्धाओं की नहीं की जाती (क्योंकि योद्धाओं की तो अभी बारी भी नहीं आ पायी थी)।[6] यहाँ इन विजयों का क्रम तैथिक रूप से दिया हुआ नहीं प्रतीत होता। कल्याणी के चालुक्य राज्य से भोज का संघर्ष उसके सैनिक जीवन की सबसे प्रथम घटना प्रतीत होती है। इसका विशद् वर्णन प्रबंध चिन्तामणि में प्राप्त होता है।[7] जिस समय भीम प्रथम सिंध पर आक्रमण करने जा रहा था तब भोजराज ने अपने सेनापति को गुजरात पर आक्रमण करने भेजा। चालुक्य राज्य पर आक्रमण कर राजधानी अन्हिलपाटन को लूटा जिसमें चालुक्यों की अत्यधिक क्षति हुई। भोज के चालुक्य राज पर आक्रमण के सबसे पहले उल्लेख विक्रम संवत् 1076 (1020 ई0) के बांसवाड़ा[8] और बेतमा अभिलेखों[9] में मिलते हैं, जिसमें 'कोंकणविजयपर्व' और 'कोंकणग्रहणविजयपर्व' के मनाये जाने का वर्णन है। भोज के सामंत यशोवर्मा का काल्वन अभिलेख[10] भी उसकी कर्णाट, लाट और कोंकण विजय का उल्लेख करता है।

कल्याणी के चालुक्यों के विरूद्ध आक्रमण के पश्चात् भोज ने लाट और कोंकण की विजयें की होंगी जैसा कि 'उदयपुरप्रशस्ति' और काल्वन अभिलेख से लाट की विजय प्रमाणित है। काल्वन (नासिक) अभिलेख में कहा गया है कि 'भोजराज के प्रसाद से प्राप्त आधा 'सेलुकनगर' (सतना) साथ में डेढ़ हजार ग्राम (1500 ग्राम) का भोक्ता श्री यशोवर्मा ...।[11] स्पष्ट है कि कीर्तिराज[12] को वहाँ से (लाट) अपदस्थ कर भोज ने यशोवर्मा को अपने प्रशासक के रूप में नियुक्त किया था। लाट से आगे समुद्र किनारों से होते हुए उसने कोंकण (कर्णाट) पर अपनी अधिसत्ता स्थापित की। वहाँ शिलाहार राजाओं का शासन था। भोज का समकालीन उत्तरी कोंकण का शिलाहार शासक अरिकेशरिन् 'केशरीराज' (1015–1025 ई0) था जिसके पिता अपराजित ने भोज के पिता सिन्धुराज की मदद की थी।[13]

इस अभियान की तिथि 1020 ई0 के कुछ पूर्व थी, उसका 'विजयपर्व' अथवा 'विजयग्रहणपर्व' मनाने के लिए भोज ने उपर्युक्त बांसवाड़ा और बेटमा अभिलेखों को उत्कीर्ण करवाया और ब्राह्मणों को दान दिया। जयसिंह द्वितीय के मीरज अभिलेख आधार पर यह प्रतीत होता है कि 1024 ई0 के पूर्व ही जयसिंह भोज का कोंकण (कर्णात) के अधिकार से हटा चुका था।[14]

इन्द्ररथ नामक नरेश संभवतः सोमवंशी राजा था जिसकी राजधानी आदिमनगर थी। यह आधुनिक मुखलिंगम है जो उड़ीसा के गंजाम जिले में स्थित है। यह कलिंग के गंगों का सामंत था।[15] तोग्गल जिस पर भोजराज द्वारा विजय प्राप्त करने का उल्लेख है, की पहचान करना कठिन है। तोग्गल अभारतीय नाम जान पड़ता है। भाटिया का मत है कि वह महमूद गजनवी का कोई सिपहसालार था।[16] प्रशस्ति के कथानुसार जिस तुरूष्क को अपने भृत्यों द्वारा भोज ने हराया वह उस मत के अनुसार महमूद गजनवी की सैनिक टुकड़ी का नेता था। हमें अन्य साक्ष्यों से ज्ञात है कि महमूद गजनवी ने 1024–26 ई0 में सोमनाथ पर जैसलमेर–मारवाड़–गुजरात के मार्ग से आक्रमण किया था। गुजरात के चालुक्य शासक भीम ने भाग कर दुर्ग में शरण ली। महमूद ने सोमनाथ को लूटा परन्तु उपरोक्त मार्ग से लौटने का साहस न कर सका क्योंकि वहाँ शक्तिशाली परमदेव की सेनाएँ उसका सामना करने हेतु प्रतीक्षारत थी। इस सम्बन्ध में समकालीन लेखक गर्दीजी[17] ने लिखा है कि महमूद ने अपनी विजय को हार में बदल जाने के भय से वापसी के लिए वह कठिन मरुस्थल मार्ग (सिन्ध) से होते हुए मुल्तान वापस गया। महमूद गजनवी का भोजराज की सेनाओं से सामना करने से कतराना ही वास्तव में प्रस्तुत अभिलेख में तुरुष्कों की हार लिख दिया गया हो।

उदयपुर प्रशस्ति[18] एवं यशोवर्मा के काल्वन अभिलेख[19] में भोज द्वारा चेदीश्वर पर विजय का उल्लेख है। मालवा के दक्षिण–पूर्व में गांगेयदेव विक्रमादित्य (1015–1042 ई0) के नेतृत्व में डाहल के कलचुरियों की सत्ता तेजी से अपना शक्ति विस्तार कर रही थी। सीमा पर होने क कारण मालवों से उसका संघर्ष स्वाभाविक ही था। 'पारिजातमंजरी' नामक नाटक से ज्ञात होता है कि चेदिराज की पराजय का उत्सव भोज ने मनाया था।[20]

परमार अभिलेखों में चंदेलों से सम्बन्ध के बारे में कोई सूचना नहीं मिलती। इस समय विद्याधर चन्देल एक महत्वाकांक्षी और शक्तिशाली शासक था जो मालवा के पूर्व में बुंदेलखण्ड पर राज्य करता था। एक चन्देल अभिलेख और कछवाहा साक्ष्यों से इस सम्बन्ध में कुछ जानकारी प्राप्त होती है। वी0वी0 मिराशी का मत है कि, भोज और कलचुरि नरेश गंगेय विद्याधर के नेतृत्व में कन्नौज के राज्यपाल के विरूद्ध युद्ध कर रहे थे।[21] डॉ0 डी0सी0 गांगुली की मान्यता है कि भोज ने चंदेल राज्य पर आक्रमण किया और मुँह की खायी।[22] किन्तु इसका कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं है। विद्याधर की मृत्यु के बाद दूबकुण्ड के कछवाहों ने चन्देलों की ह्रासोन्मुख सत्ता को छोड़कर भोज की अधीनता स्वीकार कर ली। विक्रमसिंह के दूबकुण्ड अभिलेख विक्रम संवत् 1145 (1088 ई0) से ज्ञात होता है कि 'जिस अर्जुन ने विद्याधर चन्देल की ओर से कन्नौज राज राज्यपाल का वध किया, उसी के पुत्र अभिमन्यु की अश्वों की कुशलता भोज ने प्रशंसित की।[23] उल्लेखनीय है कि

कछवाहों का राज्य मालवा के उत्तर में स्थित था परिणामतः परमार सेनाएँ कन्नौज के आस पास के क्षेत्रों पर अधिकृत हो गयीं और उत्तर प्रदेश तथा बिहार के प्रदेशों पर अधिकार के लिए गांगेयदेव और लक्ष्मीकर्ण से उसके युद्धों का दौर प्रारम्भ हो गया। इस अभियान में भोज ने गुर्जर राजा को भी हराया।[24] परमार साम्राज्य के उत्तर में शाकम्भरी के चाहमानों का राज्य था भोज ने उन पर भी आधिपत्य स्थापित किया था।[25]

भोजदेव के तिलकवाड़ा ताम्र पत्र लेख[26] (विक्रम संवत् 1103 = 1046 ई0) में उल्लिखित है कि भोजदेव के लिए उसके सामंत सुरादित्य ने अन्य शत्रु नरेशों के साथ सातवाहन नामक नरेश को भी हराया था। यह सातवाहन नरेश कौन था इसके विषय में बहुत विवाद है। ए0सी0 मित्तल ने बहुत विस्तारपूर्वक इसका विवेचन किया है।[27]

भोज एक लम्बे समय तक अपनी शक्ति की पराकाष्ठा पर था। उसके बारे में सत्य ही कहा गया है कि 'जिसने कैलाश से मलय तक तथा उदयाचल से अस्ताचल तक संपूर्ण पृथ्वी का पृथुराज के समान उपभोग किया, जिसने अपने धनुष की डोरी से सहज ही में दिग्पालों को उखाड़ कर दिशाओं में फेंक दिया तथा जिसने पृथ्वी को परमप्रीति से प्रसन्न किया।[28] इस प्रकार उसने सभी दिशाओं में विजयें प्राप्त कर परमार सत्ता को बेजोड़ बना दिया किन्तु उसकी सैनिक सफलतायें ही अन्त में उसके राजनीतिक पतन का कारण बन गयीं। आयु ढलने के साथ ही उसने सैनिक मामलों में कम रूचि ली और सांस्कृतिक क्रियाकलापों में अधिक व्यस्त रहने लगा। उसके सभी विरोधी अपने पराजयों का बदला लेने के लिए सक्रिय होने लगे। जैसे पूर्व में कलचुरि राजा लक्ष्मीकर्ण (1041–1072 ई0), पश्चिम में भीम प्रथम चालुक्य (1024–1064) दक्षिण में सोमेश्वर प्रथम (1044–1068) आदि। लगभग 1047 ई0 में कर्णाट का शासक सोमेश्वर (पुत्र जयसिंह–II) ने भोज को पराजित कर राजधानी धारा को लूटा।[29] चालुक्य सेनाओं ने धारा और उज्जैन नगर लूटकर उसे जला दिया तथा उसके दण्डनायक गुणमान्य ने माण्डू पर अधिकार कर लिया।[30] सोमेश्वर की धारा विजय से भोज की अजेयता का भिथक ढह गया और उसके अन्य शत्रु भी उस पर टूट पड़े। भोज ने गांगेयदेव कलचुरि को भी पराजित किया था जिसका महत्वाकांक्षी पुत्र लक्ष्मीकर्ण भोज से बदला लेने की ताक में था। उधर पश्चिम में भीम भी उससे पराजित होकर मन ही मन अवसर की खोज में था। प्रबन्धचिन्तामणि[31] में इस बात की चर्चा है कि भीम (पश्चिम) और कर्ण (पूर्व में) ने मिलकर मालवा पर आक्रमण करने की एक योजना बनाई। भोज भी अपनी तैयारियों में लगा ही था कि बीमार पड़ गया और शीघ्र ही मर गया। कर्ण ने धारा को पूरी तरह से लूट लिया। धारा की लूट के प्रश्न पर भीम और कर्ण में युद्ध छिड़ गया। जहाँ तक भोज के साम्राज्य विस्तार का प्रश्न है पूर्व में कलिंग और चेदि, उत्तर और पूर्वोत्तर में ग्वालियर होते हुए सारा उत्तर प्रदेश और बिहार का कुछ भाग, पश्चिम में लाट और वहाँ से समुद्र के किनारे होते हुए अपरांत और कोंकण तथा उत्तर–पश्चिम में मेवाड़ और मारवाड़ का बहुत बड़ा भाग एक समय उसके आधिपत्य में था।

भोजराज केवल सैनिक सफलताओं के कारण नहीं अपितु संस्कृति के संरक्षक के रूप में सर्वाधिक विख्यात हुआ। उदयपुर प्रशस्ति में उल्लिखित है कि वह एक अद्वितीय रत्न था।[32] उसकी प्रशंसा में कहा गया है कि 'उसने जो प्राप्त किया, जो आदेश दिया, जो दान किया एवं जो ज्ञात किया, वह कोई न कर सका। आगे लिखता है कि कविराज श्री भोज की इससे अधिक प्रशंसा क्या हो सकती है। प्रस्तुत अभिलेख में उल्लिखित है कि भोजराज ने केदारेश्वर, रामेश्वर, सोमनाथ, सुडीर, काल, अनल व रूद्र के मंदिरों का चारों ओर निर्माण कर पवित्र पृथ्वी को यथार्थ नामवाली बनाया।[33] 'समरांगणसूत्रधार' और 'युक्तिकल्पतरू' में वास्तुशास्त्र का प्रतिपादन कर उन्हें प्रयोग में लाते हुए अनेक सुन्दर भवनों, नगरों और झीलों का निर्माण करवाया। 'प्रबन्धचिन्तामणि' के अनुसार भोजराज ने धारा नगरी को सुन्दर महलों और मंदिरों से नये सिरे से सजाया।[34] धार में ही उसने एक सरस्वती सदन जो आज भी भोजराज के नाम से विख्यात है का निर्माण करवाकर वहाँ सरस्वती देवी की मूर्ति स्थापित की।[35] भोपाल के पास 'भोजपुर' नामक नगर का निर्माण भी करवाया।[36] उसने विशाल भोजताल (झील) बनवाई।[37]

भोजपुर की प्रसिद्धि विद्वानों और कवियों को दिये गये उसके आश्रय और संरक्षण तथा स्वयं के साहित्य निर्माण से हुई। राजा भोज के आग्रह पर धनपाल ने 12000 श्लोक प्रमाण, गद्य प्रचुर, रसमय ऐसी तिलकमंजरी[38] नाम की जैन कथा की रचना की जो न केवल तत्कालीन सामाजिक–आर्थिक पक्षों पर प्रकाश डालती है अपितु कुछ राजनीतिक घटनाओं एवं जैन धर्म पर भी प्रकाश डालती है। 'कविराज' भोज ने स्वयं भी व्याकरण आयुर्वेद, वास्तुशास्त्र, ज्योतिष और धर्मशास्त्र जैसे विभिन्न विषयों पर ग्रंथ लिखे जिन्हें बाद में अनेकानेक लेखकों ने उद्धृत किया है।[39] हम साहित्य पर विस्तारपूर्वक चर्चा इसके पहले की 'प्रगति आख्या' में कर चुके हैं, इसलिए यहाँ उसकी पुनरूक्ति आवश्यक प्रतीत नहीं होता।

भोज की मृत्यु (1055 ई0) के साथ परमारों के उत्कर्ष का युग समाप्त हो चुका था। भारतीय राजनीति में इनकी भूमिका केवल सुरक्षात्मक रह गयी थी। मालवा पर लगातार बाहरी आक्रमण होते रहे। भोज के उत्तराधिकारी इतने कमजोर साबित हुए कि वे उनकी विरासत को सफलतापूर्वक संभाल नहीं सके और परमार साम्राज्य का अधःपतन हो गया। पूर्वमध्यकालीन मालवा के इतिहास में पुनः भोजराज जैसा समय कभी नहीं आया। उदयपुरप्रशस्ति[40] में उल्लिखित है कि 'इस शिवभक्त (भोजराज) के स्वर्ग चले जाने पर धारा नगरी के समान सारी पृथ्वी शत्रु रूपी अंधकार से व्याप्त हो गयी।' मांधाता ताम्रपत्र

लेख[41] से ज्ञात होता है कि 1055–56 ई0 में धारा नगरी में जयसिंह राज्य कर रहा था। इस अभिलेख का परमार वंशावली जो उदयपुर प्रशस्ति[42] और नागपुर प्रशस्ति[44] आदि से प्राप्त होती है कोई उल्लेख नहीं है। मेरूतुंग कृत 'प्रबंधचिंतामणि'[43], उदयपुरप्रशस्ति एवं नागपुरप्रशस्ति[45] से स्पष्ट है कि मालवा तहस–नहस हो गया था। सम्भवतः भोज का कोई और पुत्र नहीं था। नागपुरप्रशस्ति के अनुसार सत्ता के लिए परमार राजकुमारों में संघर्ष आरंभ हो गया था। कल्याणी के चालुक्य नरेश सोमेश्वर–प्रथम की सहायता से जयसिंह राजसिंहासन पाने में सफल हो गया।[46]

निष्कर्ष

इस प्रकार स्पष्ट है कि भोजदेव 11वीं सदी का एक सर्वश्रेष्ठ व महान शासक था। यद्यपि कि उसके अभिलेख मुख्यतः दानपत्र है, फिर भी उसकी राजनीतिक उपलब्धियों सहित उसके साम्राज्य विस्तार का परिचय देते हैं। उसने चालुक्य सोमवंशी, तोग्गल, चेदि, गुर्जर आदि सहित सभी दिशाओं में विजय प्राप्त कर परमार सत्ता को बेजोड़ बना दिया, किन्तु उसकी सैनिक सफलतायें ही अन्त में उसके राजनीतिक पतन का कारण बनी; आयु ढलने के साथ ही उसने सैनिक मामलों में कम रूचि ली और सांस्कतिक क्रियाकलापों में अधिक व्यस्त रहने लगा। संस्कृति के संरक्षक के रूप में सर्वाधिक विख्यात हुआ। अंततः हम कह सकते हैं कि पूर्व मध्यकालीन मालवा के इतिहास में पुनः भोजदेव जैसा समय कभी नहीं आया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *इंस्क्रिप्शंस ऑफ द इम्पीरियल परमाराज, (सं0) ए0सी0 मित्तल, एल0डी0 इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी, अमदाबाद, 1979, पृ0 124, श्लोक 16, 'उदयपुरप्रशस्ति'– '.... सिन्धुराज .... जिससे भोजराज उत्पन्न हुआ। जिसने उत्तम व्यक्तियों को भी कंपा दिया व जो अद्वितीय रत्न था'.*
2. *पूर्वोद्धृत, पृ0 42 (हिन्दी अनुवाद) पंक्ति 6, मोडासा ताम्रपत्र अभिलेख, विक्रम संवत् 1067 अर्थात् 1011 ई0.*
   – कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम (सं0) एच0वी0 त्रिवेदी, अंक VII(II), नई दिल्ली, 1978, पृ0 27–31, प्लेट VIII-IX.
3. *एपिग्रैफिया इण्डिका, अंक I] पृ0 232–233.*
4. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम (सं0) एच0वी0 त्रिवेदी, अंक VII(II), नई दिल्ली 1978, पृ0 61, प्लेट XX.*
5. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम (सं0) एच0वी0 त्रिवेदी, अंक VII(II), नई दिल्ली 1978, पृ0 61.*
   पृ0 27–31, प्लेट VIII-IX – मोडासा कॉपरप्लेट इंस्क्रिप्शन ऑफ भोजदेव (विक्रम) संवत् 1067 = 1011 ई0;
   पृ0 31–35, प्लेट X-XI – महुडी कॉपरप्लेट इंस्क्रिप्शन ऑफ भोजदेव (विक्रम) संवत् 1074 = 1018 ई0;
   पृ0 35–38, प्लेट XII – बेरमा कॉपरप्लेट इंस्क्रिप्शन ऑफ भोजदेव (विक्रम) संवत् 1076 = 1020 ई0;
   पृ0 39–42, प्लेट XIII – बांसवाड़ा कॉपरप्लेट इंस्क्रिप्शन ऑफ भोजदेव (विक्रम) संवत् 1076 = 1020 ई0;
   पृ0 42–45, प्लेट XIV – उज्जैन कॉपरप्लेट इंस्क्रिप्शन ऑफ भोजदेव (विक्रम) संवत् 1078 = 1021 ई0;
   पृ0 45–48, प्लेट XV – देपालपुर कॉपरप्लेट इंस्क्रिप्शन ऑफ भोजदेव (विक्रम) संवत् 1079 = 1023 ई0;
   पृ0 48–49, प्लेट XVI-A – ब्रिटिश म्यूजियम सरस्वती इमेज इंस्क्रिप्शन (विक्रम) संवत् 1091 = 1034 ई0;
   पृ0 50–54, प्लेट XVI-B & XVII – तिलकवाड़ा कॉपरप्लेट इंस्क्रिप्शन ऑफ भोजदेव (विक्रम) संवत् 1103 = 1046 ई0;
   पृ0 54–60, प्लेट XVIII & XIX-A – काल्वन प्लेट इंस्क्रिप्शन ऑफ द टाइम ऑफ भोजदेव (तिथि रहित);
   पृ0 60–61, प्लेट XIX-B – भोजपुर फ्रागमेंटरी स्टोन इंस्क्रिप्शन ऑफ द टाइम ऑफ भोजदेव (तिथि रहित) – यह लेख जैन प्रतिमा की पादपीठिका पर उत्कीर्ण है।
6. *इंस्क्रिप्शंस ऑफ द इम्पीरियल परमाराज, (सं0) ए0सी0 मित्तल, एल0डी0 इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी, अहमदाबाद, 1979, पृ0 125. मूलपाठ (अनुवाद) श्लोक–19.*
7. *प्रबन्धचिन्तामणि, मेरुतुंगकृत, (हिन्दी अनुवाद), हजारी प्रसाद द्विवेदी, सिन्धी जैन ग्रंथमाला, 1940, प0 29–40.*
8. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम (सं0) एच0वी0 त्रिवेदी, अंक VII(II), नई दिल्ली 1978, पृ0 41, श्लोक 3, पंक्ति 10.*
9. *पूर्वोद्धृत, पृ0 38, श्लोक 5, पंक्ति 15.*
10. *पूवोद्धृत, पृ0 58, पंक्ति 6.*
11. *पूर्वोद्धृत, पंक्ति 7–8.*
12. *पूवोद्धृत, अंक VII(I), 1991, पृ0 21.*
13. *पूवोद्धृत, पृ0 22.*
14. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम (सं0) एच0वी0 त्रिवेदी, अंक VII(I), पृ0 22.*
15. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम (सं0) एच0वी0 त्रिवेदी, अंक VII(I), नई दिल्ली 1991, पृ0 21.*
16. *भाटिया, प्रतिपाल, द परमार्स, नई दिल्ली, 1970, पृ0 82–83.*
17. *गर्दीजी, अल्, किताब–जैन्–उल–अखबार, सं0 मुहम्मद नाजिम बर्लिन् 1928, अंग्रेजी अनुवाद, श्री राम शर्मा, इण्डियन हिस्ट्री क्वाटर्ली, अंक IX, पृ0 934–942*
18. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम (सं0) एच0वी0 त्रिवेदी, अंक VII(II), नई दिल्ली 1978, पृ0 81, श्लोक 19, पंक्ति 20.*
19. *पूर्वोद्धृत, पृ0 58, पंक्ति 6.*
20. *एपिग्रैफिया इण्डिया, अंक VIII, पृ0 101, श्लोक 3.*

21. *जैन, के0सी0, मालवा थ्रू द एजेज, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 1972, पृ0 338.*
22. *गांगुली, डी0सी0, परमार राजवंश का इतिहास, (हिन्दी अनुवाद) लखनऊ 1971, पृ0 75.*
23. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम VII(I), नई दिल्ली 1991, पृ0 23.*
24. *इंस्क्रिप्शनम् ऑफ द इम्पीरियल परमाराज (सं0), ए0सी0 मित्तल, एल0डी0 इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी, अहमदाबाद, 1979, पृ0 125, मूलपाठ (अनुवाद) श्लोक–19.*
25. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम VII(I), नई दिल्ली 1991, पृ0 23–24.*
26. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम VII(II), नई दिल्ली 1978, पृ0 50–54, श्लोक 3–5.*
27. *इंस्क्रिप्शनम् ऑफ द इम्पीरियल परमाराज (सं0), ए0सी0 मित्तल, एल0डी0 इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी, अहमदाबाद, 1979, पृ0 72–73.*
28. *पूर्वोद्धृत, पृ0 124, मूलपाठ (अनुवाद) श्लोक 17.*
29. *हैदराबाद आर्क्यालॉजिकल सीरीज नं0 8, पृ0 13, श्लोक 43, 'नगाई अभिलेख'.*
30. *जैन, के0सी0 मालवा थ्रू द एजेज, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 1972, पृ0 351.*
31. *प्रबन्धचिन्तामणि, मेरुतुंगकाचार्य कृत, हिन्दी अनुवाद, हजारी प्रसाद द्विवेदी, सिंधी जैन ग्रन्थमाला, 1940, पृ0 60–63.*
32. *इंस्क्रिप्शनम् ऑफ द इम्पीरियल परमाराज (सं0), ए0सी0 मित्तल, एल0डी0 इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी, अहमदाबाद, 1979, पृ0 124, श्लोक 16.*
33. *पूवोद्धृत, पृ0 125, श्लोक 20.*
34. *प्रबन्धचिन्तामणि, मेरुतुंगकाचार्य कृत, हिन्दी अनुवाद, हजारी प्रसाद द्विवेदी, सिंधी जैन ग्रन्थमाला, 1940, पृ0 33–36, 50–51.*
35. *इंस्क्रिप्शंस ऑफ द इम्पीरियल परमाराज (सं0), ए0सी0 मित्तल, एल0डी0 इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी, अहमदाबाद, 1979, पृ0 67, 'भोजदेव–निर्मित वाग्देवी–मूर्ति अभिलेख' संवत् 1091=1034 ई0.*
36. *पूर्वोद्धृत, पृ0 77, 'भोजपुर का भोजदेव कालीन प्रस्तर जैन प्रतिमा अभिलेख' (तिथि रहित).*
37. *पूर्वोद्धृत, पृ0 120.*
38. *तिलकमंजरीकथा, धनपालकृत, (सं0) भवदत्त शास्त्री एण्ड पाण्डुरंग परब, बम्बई 1903.*
39. *रेउ, विश्वेश्वरनाथ, राजा भोज, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, 1932*
– *ले ले, काशीनाथ कृष्ण तथा ओक, शिवराम काशीनाथ, भोजदेव की साहित्य सेवा, इतिहास आफिस, धार, 1934.*
40. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम् VII(II), नई दिल्ली, 1978, पृ0 81, श्लोक 21.*
41. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम् VII(II), नई दिल्ली, 1978, पृ0 61–64, प्लेट XX, 'मान्धाता ग्रांअ ऑफ जयसिंह' विक्रम संवत् 1112 (1056 ई0).*
42. *पूर्वोद्धृत, पृ0 75–82, प्लेट XXV.*
43. *पूर्वोद्धृत, पृ0 106–114, प्लेट XXXV, 'नागपुर म्यूजियम स्टोन इंस्क्रिप्शन ऑफ नरवर्मन, विक्रम संवत् 1161 (1104 ई0)*
44. *प्रबन्धचिन्तामणि, मेरुतुंग कृत, हिन्दी अनुवाद, हजारी प्रसाद द्विवेदी, सिंधी जैन ग्रंथमाला, 1940, पृ0 61–63.*
45. *कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इण्डिकेरम् VII(II)] नई दिल्ली, 1978, पृ0 112, श्लोक 32.*
46. *विक्रमांकदेव चरित, बिल्हड़कृत, (सं0) जी0 ब्यूलर, बम्बई 1975, पर्व 3, श्लोक 67.*